संस्कृत कक्षा 10 कर्णस्य दानवीरता (कर्ण की दानवीरता) – Karnsya Danveerta

पाठ परिचय (Karnsya Danveerta)- यह पाठ संस्कृत के प्रथम नाटककार भास द्वारा रचित कर्णभार नामक एकांकी रूपक से संकलित है। इसमें महाभारत के प्रसिद्ध पात्र कर्ण की दानवीरता दिखाई गई है। इन्द्र कर्ण से छलपूर्वक उनके रक्षक कवचकुण्डल को मांग लेते हैं और कर्ण उन्हें दे देता है। कर्ण बिहार के अंगराज्य (मुंगेर तथा भागलपुर) का शासक था। इसमें संदेश है कि दान करते हुए मांगने वाले की पृष्ठीूमि जान लेनी चाहिए, अन्यथा परोपकार विनाशक भी हो जाता है।

अयं पाठः भासरचितस्य कर्णभारनामकस्य रूपकस्य भागविशेषः।
यह पाठ 'भास' रचित कर्ण भार नामक नाटक का भाग विशेष है।
अस्य रूपकस्य कथानकं महाभारतात् गृहीतम्।
इस नाटक की कहानी महाभारत से ग्रहण किया गया है।
महाभारतयुद्धे कुन्तीपुत्रः कर्णः कौरवपक्षतः युद्धं करोति।
महाभारत युद्ध में कुन्तीपुत्र कर्ण कौरव के पक्ष से युद्ध करते हैं।
कर्णस्य शरीरेण संबद्ध कवचं कुण्डले च तस्य रक्षके स्तः।
कर्ण के शरीर में स्थित कवच और कुण्डल से वह रक्षित था।
यावत् कवचं कुण्डले च कर्णस्य शरीरे वर्तेते तावत् न कोऽपि कर्णं हन्तुं प्रभवति।
जब तक कवच और कुण्डल कर्ण के शरीर में है। तबतक कोई भी कर्ण को नहीं मार सकता है।
अतएव अर्जुनस्य सहायतार्थम् इन्द्रः छलपूर्वकं कर्णस्य दानवीरस्य शरीरात् कवचं कुण्डले च गृह्णाति।
इसलिए अर्जुण की सहायता के लिए इन्द्र छलपुर्वक दानवीर कर्ण के शरीर से कवच और कुण्डल लेते हैं।
कर्णः समोदम् अङ्गभूतं कवचं कुण्डले च ददाति।
कर्ण खुशी पूर्वक अंग में स्थित कवच और कुण्डल दे देता है।
भासस्य त्रयोदश नाटकानि लभ्यन्ते।
भास के तेरह नाटक मिले हैं।
तेषु कर्णभारम् अतिसरलम् अभिनेयं च वर्तते।
उनमे कर्णभारम् अति सरल अभिनय है।

(ततः प्रविशति ब्राह्मणरूपेण शक्रः)
(इसके बाद प्रवेश करता है ब्राह्मण रूप में इन्द्र)
शक्रः- भो मेघाः, सूर्येणैव निवर्त्य गच्छन्तु भवन्तः। (कर्णमुपगम्य) भोः कर्ण ! महत्तरां भिक्षां याचे।
इन्द्र- अरे मेघों ! सुर्य से कहो आप जाएँ। (कर्ण के समीप जाकर) बहुत बड़ी भिक्षा माँग रहा हुँ।

कर्णः- दृढं प्रीतोऽस्मि भगवन् ! कर्णो भवन्तमहमेष नमस्करोमि।

https://www.evidyarthi.in/

कर्ण- मैं खुब प्रसन्न हुँ। कर्ण आपको प्रणाम करता है।

शक्रः- (आत्मगतम्) किं नु खलु मया वक्तव्यं, यदि दीर्घायुर्भवेति वक्ष्ये दीर्घायुर्भविष्यति। यदि न वक्ष्ये मूढ़ इति मां परिभवति। तस्मादुभयं परिहृत्य किं नु खलु वक्ष्यामि। भवतु दृष्टम्। (प्रकाशम्) भो कर्ण ! सूर्य इव, चन्द्र इव, हिमवान् इव, सागर इव तिष्ठतु ते यशः।

इन्द्र- (मन में) क्या इस व्यक्ति के लिए बोला जाए, यदि दिर्घायु हो बोलता हुँ तो दिर्घायु हो जायेगा, यदि ऐसा नहीं बालता हुँ तो मुझको मुर्ख समझेगा। इसलिए दोनों को छोड़कर क्यों न ऐसा बोलूँ आप प्रसन्न हों। ;खुलकरद्ध ओ कर्ण ! सुर्य की तरह, चन्द्रमा की तरह, हिमालय की तरह, समुद्र की तरह तुम्हारा यश कायम रहे।

कर्णः- भगवन् ! किं न वक्तव्यं दीर्घायुर्भवेति। अथवा एतदेव शोभनम्।

कर्ण- क्या दिर्घायु हो ऐसा नहीं बोलना चाहिए। अथवा यहीं ठीक है

कुतः-

क्योंकि-

धर्मो हि यत्नैः पुरुषेण साध्यो भुजङ्गजिह्वाचपला नृपश्रियः।
तस्मात्प्रजापालनमात्रबुद्ध्या हतेषु देहेषु गुणा धरन्ते ।।
भगवन्, किमिच्छसि! किमहं ददामि।

व्यक्ति को धर्म की रक्षा अवश्य करनी चाहिए, क्योंकि राजा का एश्वर्य साँप की जीभ की तरह चंचल होता है। इसलिए प्रजापालन करने वाले राजा प्राण देकर भी प्रजा की रक्षा करते हैं तथा यश धारण करते हैं। अतः कर्ण के कहने का भाव है कि राजा अपने सुख के लिए नहीं जते हैं, प्रजा की रक्षा करने के लिए देह धारण करते हैं। धन या एश्वर्य तो आते जाते हैं, किन्तु यश तथा सुकर्म चिर काल तक कायम रहते हैं।

भगवन् ! आप क्या चाहते हैं ? मैं क्या दूँ ?

शक्रः- महत्तरां भिक्षां याचे।

इन्द्र- बहुत बड़ी भिक्षा माँगता हूँ।

कर्णः- महत्तरां भिक्षां भवते प्रदास्ये। सालङ्कारं गोसहस्रं ददामि।

कर्ण- मैं आपको बहुत बड़ी भिक्षा दूँगा। आभूषण सहित एक हजार गाय देता हूँ।

शक्रः- गोसहस्रमिति। मुहूर्तकं क्षीरं पिबामि। नेच्छामि कर्ण ! नेच्छामि।

इन्द्र- एक हजार गाय। मैं थोड़ी दुध पीऊँगा। नहीं चाहिए कर्ण, नहीं चाहता हूँ।

कर्णः- किं नेच्छति भवान्। इदमपि श्रूयताम्। बहुसहस्रं वाजिनां ते ददामि।

कर्ण- आप क्या चाहते हैं ? यहीं भी तो बताएँ। हजारों घोड़े आपको देता हूँ।

शक्रः- अश्वमिति। मुहूर्तकम् आरोहामि। नेच्छामि कर्ण! नेच्छामि।

इन्द्र- घोड़े ही। थोड़ी देर मैं सवारी करुँगा। नहीं चाहता हूँ कर्ण, नहीं चाहता हूँ।

कर्णः- किं नेच्छति भगवान्। अन्यदपि श्रूयताम्। वारणानामनेकं वृन्दमपि ते ददामि।

कर्ण- आप क्या चाहते हैं ? दूसरा भी सुनें ! हाथियों का अनेक समुह आपको देता हूँ।

शक्रः- गजमिति। मुहूर्तकम् आरोहामि। नेच्छामि कर्ण! नेच्छामि।

इन्द्र- हाथी ही। थोड़ी चढूँगा । नहीं चाहता हूँ कर्ण। नहीं चाहता हूँ।

कर्णः- किं नेच्छति भवान्। अन्यदपि श्रूयताम्, अपर्याप्तं कनकं ददामि।

कर्ण- आप क्या चाहते हैं ? और भी सुनें ! जरूरत से अधिक सोना देता हूँ।

शक्रः- गृहीत्वा गच्छामि। (किंचिद् गत्वा) नेच्छामि कर्ण! नेच्छामि।

इन्द्र- लेकर जाता हूँ। ;थोड़ी दूर जाकरद्ध मैं नहीं चाहता हूँ कर्ण। मैं नहीं चाहता हूँ।

कर्णः- तेन हि जित्वा पृथिवीं ददामि।

https://www.evidyarthi.in/

कर्ण- तो जीतकर भूमि देता हूँ।
शक्रः- पृथिव्या किं करिष्यामि।
इन्द्र- भूमि लेकर क्या करुँगा ?
कर्णः- तैन ह्यग्निष्टोमफलं ददामि ।
कर्ण- तो अग्निष्टोम फल देता हूँ।
शक्रः- अग्निष्टोमफलेन किं कार्यम् ।
इन्द्र- अग्निष्टोम फल लेकर क्या करुँगा।
कर्णः- तेन हि मच्छिरो ददामि।
कर्ण- तो मैं अपना सिर देता हूँ।
शक्रः- अविहा अविहा।
इन्द्र- नही-नहीं, ऐसा मत करो।
कर्णः- न भेतव्यं न भेतव्यम्। प्रसीदतु भवान्। अन्यदपि श्रूयताम्।
कर्ण- डरो नहीं, डरो नहीं, आप प्रसन्न हो जाएँ। और भी सुनें।
अङ्गै सहैव जनितं मम देहरक्षा
देवासुरैरपि न भेद्यमिदं सहस्रैः ।
देयं तथापि कवचं सह कुण्डलाभ्यां
प्रीत्या मया भगवते रुचितं यदि स्यात् ॥
कर्ण ब्राह्मणवेशधारी इन्द्र से कहता है कि मेरा जन्म इन कवच कुण्डलों के साथ हुआ है। यह कवच देवता और असुरों के द्वारा भेद नही है, फिर भी यदि आपको यहीं कवच और कुण्डल लेने की इच्छा है तो मैं प्रसन्नता पूर्वक देता हूँ। अर्थात् कर्ण अपने दानवीरता की रक्षा के लिए कवच कुण्डल देने को तैयार हो जाता है।
शक्र – (सहर्षम्) ददातु, ददातु।
इन्द्र- (प्रसन्नतापूर्वक) दे दीजिए।
कर्णः-(आत्मगतम्) एष एवास्य कामः। किं नु खल्वनेककपटबुद्धेः कृष्णस्योपायः। सोऽपि भवतु। धिगयुक्तमनुशाचितम्। नास्ति संशयः। (प्रकाशम्) गृह्यताम्।
कर्ण- (मन-ही-मन) यहीं इसकी इच्छा है। निश्चय ही कपटबुद्धिवाले श्रीकृष्ण की योजना है। वह भी हो। धिक्कार है अनुचित विचार करना। ;प्रकट रुप सुनाकरद्ध ले लीजिए।
शल्यः- अङ्गराज ! न दातव्यं न दातव्यम्।
शल्यराज- हे अंगराज ! मत दीजिए, मत दीजिए।
कर्णः- शल्यराज ! अलमलं वारयितुम् । पश्य –
कर्ण- मत रोको ! मत रोको । देखो-
शिक्षा क्षयं गच्छति कालपर्ययात्
सुबद्धमूला निपतन्ति पादपाः।
जलं जलस्थानगतं च शुष्यति ।
हुतं च दत्तं च तथैव तिष्ठति।
तस्मात् गृह्यताम् (निकृत्त्य ददाति)।
समय बीतने पर शिक्षा नष्ट हो जाती है। मजबुत जड़ो वाले वृक्ष गीर जाते हैं। नदी तालाब के जल सुख जाते हैं। लेकिन दिया गया दान और दी गई आहूति हमेशा स्थिर रहती है। अर्थात् हवन करने तथा दान करने से प्राप्त होनेवाले पुण्य हमेशा अमर रहता है।
ग्रहण कीजिए। (निकाल कर दे देता है।)

https://www.evidyarthi.in/